जलवायु परिवर्तन से बेहतर अनुकूलन

drishtiias.com/hindi/printpdf/adapting-better-to-climate-change

संदर्भ

वर्तमान समय में जलवायु परिवर्तन एक ऐसी समस्या के रूप में उभर कर समाने आया है जिसने न केवल समस्त विश्व की अर्थव्यवस्था को प्रभावित किया है बल्कि इसका प्रभाव वर्तमान पीढ़ी के साथ-साथ मानव की आने वाली पीढ़ी पर भी दृष्टिगत होगा। यह एक ऐसी सार्वभौमिक समस्या है जिसका प्रभाव समस्त प्राणीजगत पर किसी-न-किसी रूप में अवश्य पड़ रहा है। वर्तमान में पूरी दुनिया जलवायु परिवर्तन के प्रभावों को लेकर चिंतित है| विश्व भर में अनेक संगोष्ठियों तथा कार्यक्रमों का आयोजन करके न केवल इस विषय में जागरूकता का वातावरण तैयार किया जा रहा है, बल्कि इस संबंध में कारगर कदम उठाने हेतु कुछ महत्त्वपूर्ण समझौतों पर भी सहमति जताई जा रही है। जैसा कि हम सभी जानते हैं जलवायु परिवर्तन के कारण प्रभावित होने वाले क्षेत्रों में कृषि का प्रमुख स्थान है, जिसका सबसे जीवंत उदाहरण इस समय भारत के कॉफी तथा चाय उत्पादकों को हो रहे गंभीर आर्थिक नुकसान के रूप में देखा जा सकता है।

वर्तमान स्थिति

- बदलते जलवायु परिदृश्यों जैसे कि गर्मी के मौसम की अवधि में वृद्धि होना, वर्षा के औसत वितरण में कमी आना, वर्षा एवं सर्द ऋतु की अवधि में कमी होना, आकस्मिक मौसमी घटनाओं के कारण दक्षिण एशियाई क्षेत्र, विशेषकर भारत में चाय तथा कॉफी उत्पादन को भारी नुकसान का सामना करना पड़ रहा है, जिससे न केवल इन उत्पादों की उत्पादन क्षमता प्रभावित हो रही है बल्कि इनकी गुणवत्ता एवं क्षेत्रीय विविधताओं में भी बदलाव आ रहा है।
- वर्ष 2017 में 'संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण उत्सर्जन अंतराल रिपोर्ट' (UN Environment Emissions Gap Report), 2017 जारी की गई।
- इस रिपोर्ट के अंतर्गत स्पष्ट किया गया कि वर्ष 2030 हेतु व्यक्त की गई जलवायु परिवर्तन संबंधी प्रतिबद्धताओं और वर्तमान प्रतिबद्धताओं के मध्य एक विशाल 'कार्बन उत्सर्जन अंतराल' (Carbon Emissions Gap) मौजूद है।
- साथ ही इसके लिये सभी देशों द्वारा मिलकर वैश्विक औसत तापमान में होने वाली वृद्धि को 2ºC अथवा वर्ष 2100 तक 1.5ºC से कम रखने का प्रयास किया जाना चाहिये।
- पर्यावरण अनुकूलन के संबंध में संचालित इन सभी कार्यक्रमों और परियोजनाओं को कई देशों की सरकारों एवं बाहरी निधिदाताओं की मदद से वित्तपोषित अथवा कार्यान्वित किया जा रहा है।
- जैसा कि हम सभी जानते हैं, भारत सहित अन्य विकासशील देशों में जहाँ अधिसंख्य जनसंख्या कृषि पर निर्भर है, वहाँ जलवायु परिवर्तन की समस्या स्वास्थ्य और पोषण के विषय में गंभीर चुनौती प्रस्तुत कर सकती है।
- इसी प्रकार जलवायु परिवर्तन शहरों में कम आय वाले लोगों के लिये आवास और भोजन संबंधी समस्या को और गहरा कर सकता है।
- इतना ही नहीं विकासशील देशों में जहाँ देश की अधिकतर आबादी वर्षा आधारित कृषि पर निर्भर होती है वहाँ इसके और अधिक गंभीर परिणाम भी हो सकते हैं।

Environment

ग्लोबल वार्मिंग क्या है?

- प्राकृतिक संसाधनों के अत्यधिक दोहन और मानवीय क्रियाओं के कारण वायुमंडल में कार्बन-डाइऑक्साइड, मीथेन आदि गैसों की मात्रा बढ़ती जा रही है।
- कार्बन डाई-ऑक्साइड जैसी गैसें ऊष्मा को रोककर पृथ्वी को गर्म रखने का कार्य करती हैं। यदि वायुमंडल में कार्बन-डाइऑक्साइड उपस्थित न होती तो पृथ्वी एक बर्फीले रेगिस्तान से अधिक और कुछ नहीं होती।
- लेकिन, वायुमंडल में CO2 की मात्रा बढ़ने से जितनी ऊष्मा पृथ्वी को गर्म रखने के लिये चाहिये उससे कहीं ज़्यादा ऊष्मा CO2 द्वारा रोक ली जा रही है, जिसके कारण औसत तापमान में खतरनाक वृद्धि हुई है।
- यही ग्लोबल वार्मिंग का बढ़ना है और जब ग्लोबल वार्मिंग बढ़ेगी तो ध्रुवों पर जमी बर्फ पिघलेगी, समुद्र का जल-स्तर बढ़ेगा और दुनिया के कई बड़े शहर जलमग्न हो जाएंगे।
- स्पष्ट रूप से जलवायु परिवर्तन से निपटने का एकमात्र तरीका कार्बन-डाइऑक्साइड और मीथेन जैसी ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन में कमी लाना है।
- विदित हो कि वर्ष 1880 में जब पहली बार औसत वार्षिक तापमान की गणना की गई थी, तब से वर्ष 2016 के औसत वार्षिक तापमान में 1.3 डिग्री सेल्सियस की वृद्धि दर्ज की गई है।
- एक अनुमान के अनुसार, वर्तमान के तापमान और अंतिम हिम युग के तापमान में 5 डिग्री सेल्सियस का अंतर है।

एन.डी.सी.

- राष्ट्रीय स्तर पर निर्धारित योगदानों (Nationally Determined Contributions -NDCs) का बिना शर्त क्रियान्वयन और तुलनात्मक कार्यवाही के परिणामस्वरूप पूर्व औद्योगिक स्तरों के सापेक्ष वर्ष 2100 तक तापमान में लगभग 3.2ºC की वृद्धि होगी, जबकि यदि राष्ट्रीय स्तर पर निर्धारित योगदानों का सशर्त कार्यान्वयन किया जाएगा तो इसमें कम-से-कम 0.2% की कमी आएगी।

- जीवाश्म ईंधन और सीमेंट उत्पादन का ग्रीनहाउस गैसों में 70% योगदान होता है।
- रिपोर्ट में 2030 के लक्षित उत्सर्जन स्तर और 2ºC और 1.5ºC के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिये अपनाए जाने वाले मार्गों के बीच विस्तृत अंतराल है।
- वर्ष 2030 के लिये सशर्त और शर्त रहित एनडीसी के पूर्ण क्रियान्वयन हेतु तापमान में 2ºC की बढ़ोतरी 11 से 13.5 गीगाटन कार्बन-डाइऑक्साइड के समान है।

अनुकूलन परियोजनाओं की विफलताएँ

- जलवायु अनुकूलन पर चल रही बहुत सी परियोजनाओं का अध्ययन किये जाने के बाद ज्ञात होता है कि जलवायु परिवर्तन के क्या-क्या प्रभाव हो सकते हैं, स्थानीय स्तर पर किस प्रकार की भेद्यताएँ मौजूद हैं। साथ ही किसी नियत स्थानीय संदर्भ में इन्हें किस प्रकार संबोधित किया जा सकता है।
- इस संबंध में वर्ष 2010 में जेम्स फोर्ड और उनके सहयोगियों द्वारा 1,700 से अधिक परियोजनाओं का अध्ययन किया गया, इन अध्ययन से यह निष्कर्ष निकल कर आया कि अनुकूलन परियोजनाएँ सबसे कमज़ोर समुदायों की मदद नहीं पा रही थीं।
- इन परियोजनाओं का लाभ केवल उन्हीं लोगों तक पहुँच रहा था जिन्हें इससे पहले सहायता प्रदान की गई थी।
- आपको जानकर आश्चर्य होगा की जब वैश्विक अनुकूलन कोष (global Adaptation Fund) से (जलवायु परिवर्तन अनुकूलन परियोजनाओं वाले विकासशील देशों की सहायता के लिये संयुक्त राष्ट्र के जलवायु सचिवालय द्वारा प्रबंधित एक अंतर्राष्ट्रीय निधि) संचालित परियोजनाओं का विश्लेषण किया गया तो उनके संबंध में भी यही निष्कर्ष सामने आए।
- हाल ही में जब बेंजामिन सोवोकूल (Benjamin Sovocool) और उनके सहयोगियों द्वारा दुनिया भर में विभिन्न अनुकूलन परियोजनाओं का अध्ययन किया गया, तो राजनीतिक अर्थव्यवस्था के संदर्भ को ध्यान में रखते हुए यह स्पष्ट किया गया कि किस प्रकार बहु-राजनीतिक ताकतें आर्थिक वितरण को प्रभावित करती हैं और किस प्रकार यह विभिन्न सामाजिक और आर्थिक व्यवस्था का उत्पादन करती है।
- इसमें भी सबसे ख़ास बात यह है कि सीमित संसाधनों के लिये प्रतिस्पर्द्धा का माहौल उन लोगों के बीच विशेष रूप से देखा गया जो सत्ता में थे।

चार प्रमुख विषय

- इस अध्ययन के अंतर्गत उन्होंने चार मुख्य विषयों को शामिल करते हुए जलवायु परिवर्तन की एक नई रूपरेखा विकसित की, जो यह दर्शाती है कि अनुकूलन परियोजनाओं की विफलता इनमें से कौन सी है। साथ ही इस संबंध में सुधार हेतु किस प्रकार की कार्यवाही किये जाने की आवश्यकता है।
- सबसे पहला है घेर, अर्थात् जब निजी एजेंट सार्वजनिक परिसंपत्तियों का अधिग्रहण करते हैं या उनके ऊपर अपना अधिकार बढ़ा लेते हैं।
- वस्तुतः अपवर्जित विफलता का दूसरा मोड है, जो कुछ हितधारकों को बहिष्कृत या हाशिये पर लाने के मुद्दे से संबद्ध है। इसका कारण यह है कि ऐसा होने से इनकी निर्णय करने संबंधी क्षमताएँ सीमित हो जाती है।
- तीसरा है, अतिक्रमण का, जिसमें परियोजना के दौरान किये गए अनुकूलन कार्य जैव विविधता से समृद्ध क्षेत्रों में हस्तक्षेप करते हैं, जिससे पारिस्थितिक तंत्र सेवाओं में हस्तक्षेप उत्पन्न होता है। इसके परिणामस्वरूप अक्सर ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन में वृद्धि होती है।
- चौथा है, मोर्चाबंदी का, जहाँ पहले से ही असहाय अथवा स्थानीय सामाजिक संदर्भ में हाशिये पर खड़े लोग (जैसे गरीब व्यक्ति, औरतें तथा अन्य दूसरे अल्पसंख्यक) इन सभी प्रक्रियाओं से सबसे अधिक प्रभावित होते हैं।
- यहाँ यह जानना अधिक महत्त्वपूर्ण है कि इन विषयों के अंतर्गत ऐसे बहुत से उदाहरण हैं जिनमें कई विकसित और उन्नत औद्योगिक देशों की परियोजनाएँ विफल साबित हुई हैं।
- ऑस्ट्रेलिय के मेलबोर्न में एक अलवणीकरण संयंत्र का निर्माण करने के लिये बुनुओंग आदिवासी समुदाय की मूल्यवान

ज़मीन का अधिग्रहण कर इसे निजी क्षेत्र को सौंप दिया गया।

- इसी प्रकार, तंजानिया में अतिक्रमण का एक अन्य उदाहरण दर्शाता है कि किस प्रकार वहाँ पारंपरिक मछली पकड़ने वाले समुदायों की भूमि पर अतिक्रमण कर प्रवाल भित्तियों के लचीलेपन को बढ़ावा देने हेतु समुद्री संरक्षण वाले क्षेत्रों को स्थापित किया गया, जिसके बाद इस समुदाय द्वारा ऊर्जा-सघन खेती की जाने लगी जो ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन की उच्च दर का कारण बनी।
- इन सभी समस्याओं की उत्पत्ति के कारण भले ही अलग-अलग हों, लेकिन इन सभी के परिणामस्वरूप पर्यावरण पर काफी हानिकारक असर परिलक्षित हुआ है।

आगे की राह

- स्पष्ट रूप से हमें इन सभी मामलों से सबक लेने की आवश्यकता है। प्राकृतिक संसाधनों को नियंत्रित करने हेतु प्रयोग किये जाने वाले राजनीतिक और सत्तात्मक संघर्षों का प्रयोग बहुत सोच-समझ कर किये जाने की आवश्यकता है क्योंकि ये सभी अनुकूलन परियोजनाओं का ही भाग होते हैं।
- वस्तुतः इसके समाधान के तौर पर एक तंत्र विकसित किये जाने की आवश्यकता है ताकि इन सभी परियोजनाओं जैसे- ज़मीन, पानी या अन्य संसाधनों और विशेषाधिकारों के संबंध में एक सटीक व्यवस्था हो जिसके अंतर्गत इस विषय में प्रभावकारी कदम उठाए जा सके।
- इसके लिये ज़रुरी है कि योजनाओं के निर्माण के साथ-साथ अनुपालन में योजना से संबद्ध समुदायों, हितधारकों, नीति-निर्माताओं आदि सभी के संदर्भ में विचार किया जाए।

Flood

भारत के संदर्भ में

- यदि भारतीय संदर्भ में बात की जाए तो उपरोक्त अध्ययन से हमें एक बेहद महत्त्वर्ण सबक मिलता है। हालाँकि उक्त कोई भी समस्या इस क्षेत्र में पहले से संलग्नित लोगों के लिये नई नहीं है।

- इसके बावजूद इनके विषय में पहले से कार्यनीति बनाकर योजनाओं का क्रियान्वयन करने तथा उनसे उत्पन्न प्रतिकूल प्रभावों को कम करने के उपायों की तलाश की जानी चाहिये ताकि आने वाले समय में ग्लोबल वार्मिंग के प्रभाव को कम करने के लक्ष्य को हासिल किया जा सके।
- इसके अलावा, देश में पहले से ही किसी भी परियोजना के संदर्भ में जलवायु प्रभावों का आकलन करने की प्रवृत्ति रही है, ऐसा करने के पश्चात् इसके विषय में समाधान खोजे जाने तथा उसी के अनुरूप कार्य करने पर बल दिया जाता रहा है।
- उदाहरण के लिये, पानी की बचत हेतु ड्रिप सिंचाई का प्रयोग करना, पानी की उपलब्धता बढ़ाने के लिये वाटरशेड की व्यवस्था करना अथवा तूफान से बचाव के लिये तट के किनारे बाड़ों का निर्माण करना।
- हालाँकि, इसमें कोई दोराय नहीं है कि उपरोक्त सभी योजनायें सफल साबित होंगी और हम एक हद तक पर्यावरण को क्षति पहुँचने से बचा लें लेकिन इसके बावजूद इसके सामाजिक और राजनीतिक पक्ष को दरकिनार नहीं किया जा सकता है क्योंकि इसके परिणामस्वरूप होने वाला असर काफी गंभीर होता है जिस पर अक्सर ध्यान नहीं दिया जाता है।

इस प्रकार, जलवायु परिवर्तन अनुकूलन परियोजनाओं का निर्माण तथा उन पर विचार करते समय, उनकी कमज़ोरियों और लागतों के साथ-साथ समानता, न्याय एवं सामाजिक पदानुक्रम जैसे बहुत से मुद्दों के संदर्भ में समान रूप से विचार किया जाना चाहिये। अन्यथा, मौजूदा सामाजिक, आर्थिक और पारिस्थितिक समस्याएँ इतनी अधिक गहन हो जाएगी कि उनसे पार पाना असंभव हो जाएगा। अनुकूलन संबंधी नीतियों के बारे में कई पैमानों पर विचार करने की आवश्यकता है, इसके अंतर्गत न केवल घर और समुदाय बल्कि राज्य स्तर के पक्षों को महत्त्व दिया जाना चाहिये।